



विपश्यना

[साधकों का मासिक प्रेरणापत्र]

रजि. नं. १९१५६/७१

पोस्टल रजि. नं. NSK - 64

वर्ष ७ • वम्बई • बुद्धवर्ष २५२२ • वैशाख पूर्णिमा [शुक्र] • दि. २२-५-१९७८ • अंक १२

उद्बोधन

मेरे प्यारे साधक / साधिकाओ,

आओ, बोधि जगाएं।

आज बोधि-दिवस है। इस पुनीत पर्व के दिन हमें स्वयं अपनी बोधि जगाने की पावन प्रेरणा मिले।

जितनी-जितनी बोधि जागती है, उतनी-उतनी दुष्प्रज्ञता दूर होती है। भ्रम-भ्रांति मिटती है। कल्पनाओं से मुक्ति मिलती है। यथार्थ को स्वीकारने का साहस बढ़ता है। तथता को अंगीकार करने का बल मिलता है। सच्चाई का यथाभूत ज्ञान-दर्शन करने की क्षमता बढ़ती है।

साधकों, सतत सजग रहें। धर्म के नाम पर कहीं कोई छलना हमारे सिर पर सवार न हो जाय। विपश्यी साधक होने के नाते हम पूर्णतया धर्मनिष्ठ हो गए हैं, ऐसी मिथ्या धारणा न करने लें वरना अहंभाव की ग्रंथि में बुरी तरह जकड़ जायेंगे। जरा सी भूल होते ही कहीं महापतित होने का मिथ्या विनीतभाव न जगाने लें वरना हीन भाव की ग्रंथि में बुरी तरह जकड़ जायेंगे। अहं और हीन दोनों ग्रंथियों से बचते हुए वास्तविकता के मध्यम मार्ग पर चलना है।

अपने में जो सद्गुण है, उन्हें सद्गुण मानें। पर उनकी वजह से कहीं गर्वित होकर फूल न उठें। विवेक कायम रहे और समझदारी-पूर्वक उन सद्गुणों का न केवल संरक्षण करें, बल्कि संवर्धन करें।

इसी प्रकार अपने में जो दुर्गुण हैं उन्हें भी स्वीकारें। न उनकी वजह से निराशा और मायूसी का माहौल पैदा कर लें और न ही उन्हें छिपाकर अपने आप को तथा औरों को धोखा देने की कोशिश करें। यथास्थिति को स्वीकारते हुए विपश्यना साधना द्वारा उन्हें साक्षीभाव से देख-देख कर शनैः शनैः दूर करें।

जब कोई व्यक्ति मेरे साथ ऐसा व्यवहार करता है जो कि मुझे अनुचित लगता है, अन्याय व अनीतिपूर्ण लगता है तो उसे अपने प्रति दुर्व्यवहार मानकर मैं जब-जब अंध-प्रतिक्रिया करता हुआ भावावेश का शिकार हो जाता हूँ तब-तब द्वेष-दौर्मनस्य के गर्द-गुब्बारे से भर उठता हूँ। इस सच्चाई को स्वयं अपने आप भी और दूसरों के सम्मुख भी स्वीकार करने में मुझे जरा भी हिचक नहीं। स्वीकार करके मैं अपने मन का बोझ हल्का ही करता हूँ। जब अपने तथा औरों के प्रति इस प्रकार

धम्म वाणी

किञ्चापि सो कम्म करोति पापकं
कायेन वाचा उद चेतसा वा ।
अभब्ब सो तस्स पटिच्छदाय
अभब्बता दिट्ठ पदस्स वुत्ता ।
इदम्पि संघे रतनं पणीतं
एतेन सच्चेन सुवत्थि होतु ॥

— रतन सुत्त— ११

स्रोतापन्न अवस्था को पहुँचा हुआ परमपद द्रष्टा साधक यदि कभी काया, वाणी या चित्त से किञ्चित् पापकर्म कर भी लेता है तो उसे छिपाता नहीं। भगवान ने कहा है कि निर्वाण का साक्षात्कार कर लेनेवाला अपने दुष्कृत को गोपनीय नहीं रख सकता। सचमुच ! ऐसा श्रेष्ठ रत्नत्व है आर्य साधक संघ में। इस सत्य कथन के प्रभाव से स्वस्ति हो ! मंगल हो !!

सच्चाई का वर्ताव करता हूँ तो इन दुर्गुणों से छुटकारा पाने का रास्ता खुल जाता है। परंतु सच्चाई से मुंह मोड़ता हूँ और इसे मिथ्या प्रतिष्ठा का विषय बना लेता हूँ तो अपने दुर्गुण छिपाता हूँ। शुरुर्मुर्ग की तरह अपने आपको धोखा देता हूँ। हंस की चाल चलने वाले बगुले की तरह औरों को धोखा देता हूँ। इस पागलपन में अपने दुर्गुणों का पोषण ही करता हूँ। उनका संवर्धन ही करता हूँ।

अंध-प्रतिक्रिया कर लेने के बाद मैं बहुत शीघ्र ही भावावेश से मुक्त हो जाता हूँ। जिस व्यक्ति के प्रति द्वेष-दुर्भाव जगाया था, उसी के प्रति मंगल मैत्री लहराने लगती है। यह सद्गुण है। इसे स्वीकारने में मुझे जरा भी संकोच नहीं। गर्व-गुमान भी नहीं।

यह यथाभूत ज्ञान-दर्शन है। इस यथाभूत ज्ञानदर्शन से दुर्गुण स्वतः दूर होते हैं, सद्गुण स्वतः बढ़ते हैं। यथाभूत याने जैसा है, वैसा ही। बड़ा-चढ़ाकर भी नहीं, घटा-मिटकर भी नहीं। न अतिमूल्यन, न अवमूल्यन, बल्कि यथार्थ मूल्यन।

अपने दुर्गुणों की अतिरंजित व्याख्या करेंगे तो अति विनीत बनने का दंभ भरने ही लेंगे और इस प्रकार एक नया दुर्गुण प्रजनन

करने लगेंगे। अपने दुर्गुणों का अवमूल्यन करेंगे तो सच्चाई पर पदां डालेंगे और परिणाम स्वरूप उन दुर्गुणों को भीतर-भीतर फूलने फूलने का मौका देंगे।

अपने सद्गुणों की अतिरंजना करेंगे तो अहंकार का प्रजनन करेंगे। उनका अवमूल्यन करेंगे तो फिर अति विनीत बनने का दंभ भरने लगेंगे और इस प्रकार नए दुर्गुणों को पल्ले बांधने लगेंगे। इसलिये सद्गुण हैं तो सद्गुण, दुर्गुण है तो दुर्गुण, जो जैसा है वैसा ही स्वीकार करना सीखें। यही यथाभूत ज्ञानदर्शन का प्राथमिक आवश्यक कदम है। व्यवहार जगत में बोधि जगाने का उचित अभ्यास है। जब अंतर में निर्वाणदर्शनी बोधि जग जायेगी तो ऐसा स्वभाव ही हो जायेगा कि अपने सद्गुणों की भले चर्चा न करें, पर दुर्गुण और दुष्कर्म तो छिपा ही न सकेंगे। उनका अनायास उद्घाटन करने लगेंगे।

साधकों! बोधि जगाने में बड़ा मंगल समाया हुआ है। ऐसा मंगल कल्याण खूब सचे।

कल्याण मित्र, स. ना. गो.



व्यवस्था की कठिनाई

हैदराबाद के 'विपश्यना अन्तरराष्ट्रीय साधना केंद्र' के व्यवस्थापक श्री रतीलाल मेहता लिखते हैं कि अपने पिछले अनुभवों से उन्होंने देखा कि साधक शिविरों के लिए अपना नाम दर्ज करवा कर ऐन वक्त पर नहीं आते और न ही समय रहते सूचना देते हैं। इससे व्यवस्था पर बहुत भार पड़ जाता है। व्यवस्थापक यदि यह मानकर चले कि जिन्होंने अपना स्थान रिजर्व करवाया है, वे अवश्य आ रहे हैं तो उसे एक निश्चित संख्या की बुकिंग हो जाने के बाद रिजर्वेशन मांगने वालों को नटना पड़ता है। भले ही वे कितने भी गंभीर क्यों न हों, भले उन्हें विपश्यना का प्रशिक्षण दिया जाना कितना ही आवश्यक क्यों न हो! ऐसे उपयुक्त पात्रों को नटने के बाद जब रिजर्व किए हुए लोग नहीं आते तो व्यवस्थापक को दुःख तो होता ही है, पर शिविर में जगह होते हुए भी उन लोगों को धर्म से वंचित रह जाना पड़ता है, जिन्हें कि इसकी भूल थी, आवश्यकता थी। यह रिजर्व कराने वालों की गैरजिम्मेदाराना लापरवाही के फलस्वरूप होता है।

दूसरी ओर यदि व्यवस्थापक यह मान कर चले कि जितनों की बुकिंग हुई है, उसमें से अमुक प्रतिशत तो कैंसलेशन होगी ही और इस आधार पर अधिक लोगों की बुकिंग कर लेता है, महज इस भावना से कि शिविर की पूरी सहूलियतों का इस्तेमाल हो और अधिक से अधिक लोगों को लाभ मिले और ऐसा करने के बाद अनुमान के अनुसार कैंसलेशन होती नहीं तो जिनकी बुकिंग की गई, उन्हें नटना भी असंभव होता है। परिणामतः उपलब्ध सहूलियत से अधिक संख्या में साधक लेने पड़ते हैं, जिसका कष्ट सबको भोगना पड़ता है।

ऐसा अप्रिय अनुभव केवल श्री रतीभाई को ही नहीं, 'विपश्यना विश्व विद्यापीठ,' इगतपुरी के व्यवस्थापकों को भी होता ही रहता है। व्यवस्था की इस कठिनाई को दूर करने का उपाय यही है कि साधक अधिक जिम्मेदारी बरतें। कभी-कभी किसी शिविरार्थी का पत्र

आता है कि शिविर के लिए प्रस्थान करने के दिन उसके लिए कोई अपरिहार्य बाधा उपस्थित हो गई, इसलिए वह न आ सकने की पूर्व सूचना न दे सका। ऐसी स्थिति समझ में आ सकती है। परन्तु जो बुकिंग करा कर मौन रह जाते हैं, विचार बदल गया हो तो समय रहते कैंसल नहीं करवाते और अंतिम दिन कोई बाधा आ गई, जिसकी वजह से न आ सके तो उस निमित्त भी पत्र नहीं लिखते, उन्हें तो अत्यंत लापरवाह ही कहा जायेगा। शिविरार्थी भविष्य में ऐसी लापरवाही न करें, इसलिए यह विनम्र चेतावनी है। शिविर के लिए बुकिंग कराने वाला हर शिविरार्थी कृपया अपनी बुकिंग गंभीरतापूर्वक कराएं और निभाएं, यही प्रार्थना है।

—मानद मंत्री



साधना-स्तूप

सह्याद्रि पर्वतमाला की सुरम्य गोद में धम्मगिरि के शांति पठार पर 'साधना-स्तूप' का निर्माणकार्य द्रुतगति से आगे बढ़ रहा है। पहली मंजिल के शून्यागारों (ध्यान-गुफाओं) की चिनाई का काम हो गया है और उन पर छत ढाली जा रही है। इसके बाद दूसरे मंजिल के ८ शून्यागार (ध्यान-गुफाएं) और उन पर साधना-स्तूप का काम किया जायेगा। दूसरी ओर मां सयामा के लिए आचार्य-निवास की नींव खुद गई है। निर्माण का कार्य शुरू हो रहा है। वर्षा आने में समय थोड़ा ही रह गया है। फिर भी इसे समय पर पूरा करने का हर संभव प्रयत्न किया जा रहा है। कई प्रकार की बाधाओं के बावजूद भी काम करने वालों का उसाह सराहनीय है।

इस पुनीत कार्य की पूर्ति के लिए अनेकों का दान आ रहा है। विपश्यना साधना की इस परंपरा में दान केवल साधकों से ही लिया जाता है। 'विपश्यना' पत्रिका के वे पाठक जो अभी तक किसी शिविर में भाग न ले सके हों, वे कृपया अपना दान न भेजें। साधकों में से भी वे ही भेजें और तभी भेजें जब कि उन के मन में शुद्ध दान की चेतना जागी हो। किसी दबाव से या संकोच से दान न दें। दान की निर्मलता साधना केंद्र की निर्मलता को बनाए रखने में सहायक होगी।

विनीत, मानद मंत्री



साधकों के उद्गार

जयपुर से श्री कन्हैयालाल लोढ़ा लिखते हैं, "आपने विपश्यना क द्वारा जो धर्म का मार्गदर्शन कराया, उससे बहुत लाभ हो रहा है। इससे सब दुःखों का अंत व ध्रुवत्व की प्राप्ति संभव है। विपश्यना के अनुभवों से जैन धर्म के ग्रन्थों का मर्म प्रकट होने लगा है। जैन धर्म के मूल आचार ग्रंथों में विपश्यना पद्धति प्रस्तुत की गई है। उदाहरणार्थ यहां आचारांग का निम्न स्थल द्रष्टव्य है। "आययच्चक्खु लोग विपस्सी लोगस्स अहोभागं जाणइ, उड्डहं भागं जाणइ, तिरियं भागं जाणइ। गड्ढिए लोए अणुपरियट्टमाणे संधि विवित्ता इह मच्चिएहिं एस वीरि पंसिए जे बद्धे पडिमोयए। जहा अंतो तहा बाहिं जहा बाहिं तहा अंतो, अंतो अंतो देहंतराणि पासति पुडोवि सवति पडिए पडिलेहए।"

(आचारांग द्वितीय अध्याय, पंचम उद्देश)

अर्थात् इंद्रिय और मन के विषय को देखने वाला दीर्घदर्शी लोक विषयक लोक के अधोभाग को जानता है, ऊर्ध्व भाग को जानता है और तिरछे भाग को जानता है। विषयों से आसक्त लोग बार-बार भव-भ्रमण करते हैं। जो इस मनुष्य जीवन में संघि (ग्रंथि जोड़) को जानकर विषय भोगों से दूर रहता है, वही शूरवीर है। प्रशंसनीय है, बंधनों से मुक्त करने वाला है। जैसी आंतरिक स्थिति है वैसी ही स्थिति बाहर (शरीर-इंद्रिय पर) प्रकट होती है। जैसा बाहर प्रकट हो रहा है। वैसा ही अंतःकरण में है। अर्थात् अंतःकरण (कर्म) के अनुरूप ही बाहर फल मिलता है। और बाहर में जैसी शुभ-अशुभ प्रवृत्ति करते हैं वैसा ही अन्तर में कर्मों का निर्माण होता है। जो अन्तर में और अधिक अन्तर (गहराई) में शरीर की आंतरिक स्थितियों को देखता है, ऐसा करने वाला पृथग्जन (स्थूलद्रष्टा) भी पंडित जन के समान स्रोतों को देखने लगता है। अर्थात् वह अनुभव करने लगता है कि जो शरीर और चित्त में प्रकट हो रहा है, उसका स्रोत अन्तर में है।

षट्खण्डागम की टीका ध्वला पुस्तक १३ वीं में ध्यान पर ६५ गाथाएं हैं। उनमें वर्णित ध्यान पद्धति विषयना का अनुसरण करती प्रतीत होती है। उदाहरणार्थ गाथा नंबर ३२ यहां दी जाती है :-

आलंबणेहि भरियो लोगो, उद्वाहदुमणस्स खवगस्स।

जं जं मणसा पेच्चइ तं तं आलंबणं होइ॥

अर्थ :- “यह लोक ध्यान के आलंबनों से भरा हुआ है। ध्यान में मन लगाने वाला साधक मन से जिस-जिस को देखता है वह-वह ध्यान का आलंबन होता है।” यहां पर मन से चिंतन करना नहीं आया है, अपितु मन से देखना आया है जो विषयना का द्योतक है।

(उपर्युक्त उद्धरणों में आए ‘लोग’ (लोक) शब्द का अर्थ प्राणमय शरीर ही उपयुक्त लगता है।)

इसी प्रसंग में जैन धर्म की साधना पद्धति में आया ‘पौषध’ का प्रतिष्ठापाठ और विषयना साधना पद्धति में आया अष्टशील का प्रतिष्ठापाठ ‘पोसथ’ इन दोनों पाठों का शब्द-साम्य और अर्थ साम्य द्रष्टव्य है।

उपर्युक्त ध्यान-साधना पद्धतियों का साम्य इस तथ्य का द्योतक है कि जैन और बौद्ध दोनों ही एक ही श्रवण परंपरा के अंग हैं। दोनों ही का उद्देश्य चेतना को जागृत कर संवर और निर्जरा द्वारा राग द्वेष के मल को क्षीण कर वीतराग बनाना रहा है।

इगतपुरी में एक मास की साधना में आपसे जो मार्गदर्शन मिला है उससे धर्म के वास्तविक स्वरूप को समझने का लाभ मिल रहा है। कर्मों को धुनकर उनकी सघनता को तोड़ना, ग्रंथियों का भेदन करना, स्थितिघात, रसघात करना आदि साधना की अनेक क्रियाओं का रूप अब अधिक स्पष्ट दिखाई देने लगा है। आप की इस कृपा के प्रति अत्यंत आभारी हूँ।

इस पत्र के साथ मेरे मित्र विषयक-साधकों द्वारा बार-बार उठाए गए प्रश्नों का समाधान भेज रहा हूँ। इस पर आप अपनी सम्मति प्रकट करने की कृपा करें।

● (शंका-समाधान पिछली पत्रिका में प्रकाशित हो चुका है। श्री कन्हैयालालजी लोढ़ा जैन आगमों के जाने-माने विद्वान हैं। विषयना की सक्रिय साधना ने उन्हें आगमों के सही अर्थ समझने के लिए

नए आयाम दिए हैं। भगवान महावीर की कल्याणी बाणी को समझने-समझाने का इनका सत्प्रयास सर्व मंगलकारी हो !.....

- स. ना. गो)



आस्ट्रेलियन साधक माइकल रेमंड रयान लिखता है, “विषयना अहं के प्रति जागरूक रहने का अभ्यास है। अहं और परम चैतन्य को समझने की दिशा में जो सही प्रयास और सही दृष्टिकोण है, उस के लिए विषयना मेरे लिए प्रेरक और सहायक बनी है”



बाल्टीमोर, अमेरिका का साधक स्टीव हानेस लिखता है, विषयना के अभ्यास से मेरे जीवन में धैर्य और सहिष्णुता बढ़ी है। अधिक सूक्ष्म-बुद्धि आयी है। दूसरों की आलोचना करने की आदत मंद पड़ी है। समस्याओं को सही दृष्टिकोण से देख सकने की क्षमता बढ़ी है।



न्यू साउथवेल्स, आस्ट्रेलिया का विपश्यी जोन अलैक्जेंडर पीबल्स लिखता है, विषयना के अभ्यास से मेरे सारे नशे पते ब छूट गए हैं। जीवन के प्रति रचनात्मक मानस तैयार हुआ है। अन्य लोगों के प्रति अधिक संवेदनशील हो गया हूँ और सहायक भी।



इगतपुरी में स्वयं-शिविर

क्रमांक	१२	दि.	२१-५-७८	से	३१-५-७८	तक
१	१३	११-६-७८	से	२२-६-७८	१३	१३
२	१४	२२-६-७८	से	२-७-७८	१४	१४
३	१५	२-७-७८	से	१२-७-७८	१५	१५
४	१६	१२-७-७८	से	२२-७-७८	१६	१६
५	१७	२३-७-७८	से	३-८-७८	१७	१७
६	१८	३-८-७८	से	१४-८-७८	१८	१८

नोट १) स्वयं-शिविर में केवल वे पुराने साधक ही सम्मिलित हो सकेंगे जो कि विद्यापीठ की अनुशासन-संहिता का कड़ाई से पालन कर सकें।

२) कोई साधक यदि पूरे शिविर में सम्मिलित न हो सके तो वह अपनी सुविधानुसार बीच में कम दिनों के लिए भी सम्मिलित हो सकता है।

३) प्रत्येक अवस्था में आवश्यक है कि व्यवस्थापक से अपना स्थान सुरक्षित रखने की पूर्व स्वीकृत प्राप्त कर लें।

४) यथासंभव प्रत्येक शनिवार-रविवार को पूज्य गुरुजी ‘धम्मगिरि’ पर उपस्थित रहेंगे। अतः जिस साधक को कोई विशेष कठिनाई हो, उनसे मार्ग-दर्शन प्राप्त कर सकेंगे।

५) स्वयं-शिविर में अन्य सभी सुविधाएँ उपलब्ध रहेंगी।

आगामी शिविर

- शिविर क्रमांक १४९ इगतपुरी दि. ३१-५-७८ से ११-६-७८ तक (हिन्दी)
 संपर्क : व्यवस्थापक, विपश्यना विश्व विद्यापीठ, धम्मगिरि, इगतपुरी-४२२४०३ (नासिक-महाराष्ट्र) फोन नं. ७६
 शिविर क्रमांक १५० हैदराबाद (वि. अं. सा. के.) दि. १२-७-७८ से २२-७-७८ तक (हिन्दी)
 " १५१ " " " दि. ४-८-७८ से १४-८-७८ तक (हिन्दी)
 संपर्क : श्री रतीलाल एम. मेहता, द्वारा-विपश्यना अन्तर्राष्ट्रीय साधना केन्द्र. (कुमुद इण्डस्ट्रीज कम्पाउंड) १२.६, नागार्जुन सागर रोड, हैदराबाद-५०० ०३५ (आंध्र प्रदेश) तार : C/o फूजीयामा फोन नं. ५९२५९.
 नोट :- १) कृपया साधना शिविर में शामिल होने से पूर्व शिविर-व्यवस्थापक के पास अपना नाम रजिस्टर करा लें । किसी कारणवश शिविर में सम्मिलित न हो सकते हों तो कृपया पर्याप्त समय रहते सूचित करें ताकि किसी अन्य प्रत्याशी को स्वीकृति दी जा सके ।
 २) हिन्दी शिविर में अंग्रेजी प्रवचन सुनने हेतु अंग्रेजी टेप की सुविधा उपलब्ध रहेगी ।
 ३) शिविरों के नियम कड़े होते हैं । उनका कड़ाई से पालन कर सकें तो ही भाग लेना चाहिए ।

बस्तीराम नारायणदास सारडा

सूना महल, तल मजला,
 नेताजी सुभाष रोड, बम्बई-२०
 फोन नं. २५९९२६

पोस्ट बॉक्स नं. १०२
 नासिक-४२२ ००१.
 फोन नं. २७६१.

की मंगल कामनाओं सहित ।

दूहा धरम रा

अपणी स्तुति करतो हुयो, थकै नहीं नादान ।
 देख पराए दोस नै बढ चढ करै बखान ॥
 निज मन मैलो ही करै, देख पराया पाप ।
 बढै आपणै मैल सूं, अपणो ही संताप ॥
 अपणै मन का छदम छल, अपणै ही सिर भार ।
 अपणै मन की सरलता, अपणों ही सुख सार ॥
 अपणो भलो न कर सक्यो, देख पराया दोस ।
 होस जग्यो सुधरण लग्यो, जद देख्या निज दोस ॥
 प्रकट करै निज दोस नै, मन हलको ही होय ।
 दोस बढण पावै नहीं, सहज सरल चित होय ॥
 मणां पाप ज्यूं उतर कर, पुलकित हुवै सरीर ।
 हलको हूज्या फूल सो, मिटज्या सारी पीर ॥

दोहे धरम के

अन्यायी पर क्रुद्ध हो, दिया घोर अभिशाप ।
 हार हो गयी धरम की, हुआ बिजेता पाप ॥
 क्या देखे पर दोष को ? देख स्वयं के दोष ।
 दोषी चित व्याकुल रहे, सुखी रहे निर्दोष ॥
 देखें अपने चित्त को, देखें चित के दोष ।
 दोष देखते देखते, चित्त बने निर्दोष ॥
 प्रकट करे जो सरल हो, अपने मन के पाप ।
 ग्रंथि निबंधन से बचे, छुटे दुःख संताप ॥
 अपने मन के दोष को, करुं आज स्वीकार ।
 उतरे अपने दोष का, जरा जरा तो भार ॥
 बोझ हटे जब पाप का, पुलकित होय शरीर ।
 लगे छलकने चित्त में, मंगल मैत्री नीर ॥

सयाजी ऊ बा खिन मेमोरियल ट्रस्ट के लिए संपादक, मुद्रक एवं प्रकाशक : रामप्रताप यादव, ग्रीन हाऊस, ग्रीन स्ट्रीट, फोर्ट, बम्बई २३.
 टेलिफोन : २६८६७९, मुद्रण स्थान : अक्षरचित्र मुद्रणालय, सातपुर, नासिक ४२२ ००७. टेलिफोन ८२५१
 विज्ञापन : आधा पृष्ठ रू. ४००/-, चौथाई पृष्ठ रू. २०० /-, वार्षिक शुल्क रू. ५/-, आजीवन शुल्क रू. ५१/-

“विपश्यना”

पो. रजि. नं. NSK/64

प्रेषक :

सयाजी ऊ बा खिन मेमोरियल ट्रस्ट
 विपश्यना विश्व विद्यापीठ
 धम्मगिरि, इगतपुरी-४२२ ४०३.
 (नासिक - महाराष्ट्र)

To